Vol 6 Issue 9 October 2016

ISSN No : 2230-7850

International Multidisciplinary Research Journal

Indian Streams Research Journal

Executive Editor
Ashok Yakkaldevi

Editor-in-Chief
H.N.Jagtap

Welcome to ISRJ

RNI MAHMUL/2011/38595 **ISSN No.2230-7850**

Indian Streams Research Journal is a multidisciplinary research journal, published monthly in English, Hindi & Marathi Language. All research papers submitted to the journal will be double - blind peer reviewed referred by members of the editorial board.Readers will include investigator in universities, research institutes government and industry with research interest in the general subjects.

Regional Editor

Dr. T. Manichander

Mr. Dikonda Govardhan Krushanahari
Professor and Researcher ,
Rayat shikshan sanstha's, Rajarshi Chhatrapati Shahu College, Kolhapur.

International Advisory Board

Kamani Perera
Regional Center For Strategic Studies, Sri Lanka

Janaki Sinnasamy
Librarian, University of Malaya

Romona Mihaila
Spiru Haret University, Romania

Delia Serbescu
Spiru Haret University, Bucharest, Romania

Anurag Misra
DBS College, Kanpur

Titus PopPhD, Partium Christian University, Oradea,Romania

Mohammad Hailat
Dept. of Mathematical Sciences, University of South Carolina Aiken

Abdullah Sabbagh
Engineering Studies, Sydney

Ecaterina Patrascu
Spiru Haret University, Bucharest

Loredana Bosca
Spiru Haret University, Romania

Fabricio Moraes de Almeida
Federal University of Rondonia, Brazil

George - Calin SERITAN
Faculty of Philosophy and Socio-Political Sciences Al. I. Cuza University, Iasi

Hasan Baktir
English Language and Literature Department, Kayseri

Ghayoor Abbas Chotana
Dept of Chemistry, Lahore University of Management Sciences[PK]

Anna Maria Constantinovici
AL. I. Cuza University, Romania

Ilie Pintea,
Spiru Haret University, Romania

Xiaohua Yang
PhD, USA

.....More

Editorial Board

Pratap Vyamktrao Naikwade
ASP College Devrukh,Ratnagiri,MS India

R. R. Patil
Head Geology Department Solapur University,Solapur

Rama Bhosale
Prin. and Jt. Director Higher Education, Panvel

Salve R. N.
Department of Sociology, Shivaji University,Kolhapur

Govind P. Shinde
Bharati Vidyapeeth School of Distance Education Center, Navi Mumbai

Chakane Sanjay Dnyaneshwar
Arts, Science & Commerce College, Indapur, Pune

Awadhesh Kumar Shirotriya
Secretary,Play India Play,Meerut(U.P.)

Iresh Swami
Ex - VC. Solapur University, Solapur

N.S. Dhaygude
Ex. Prin. Dayanand College, Solapur

Narendra Kadu
Jt. Director Higher Education, Pune

K. M. Bhandarkar
Praful Patel College of Education, Gondia

Sonal Singh
Vikram University, Ujjain

G. P. Patankar
S. D. M. Degree College, Honavar, Karnataka

Maj. S. Bakhtiar Choudhary
Director,Hyderabad AP India.

S.Parvathi Devi
Ph.D.-University of Allahabad

Sonal Singh,
Vikram University, Ujjain

Rajendra Shendge
Director, B.C.U.D. Solapur University, Solapur

R. R. Yalikar
Director Managment Institute, Solapur

Umesh Rajderkar
Head Humanities & Social Science YCMOU,Nashik

S. R. Pandya
Head Education Dept. Mumbai University, Mumbai

Alka Darshan Shrivastava
Shaskiya Snatkottar Mahavidyalaya, Dhar

Rahul Shriram Sudke
Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore

S.KANNAN
Annamalai University,TN

Satish Kumar Kalhotra
Maulana Azad National Urdu University

Address:-Ashok Yakkaldevi 258/34, Raviwar Peth, Solapur - 413 005 Maharashtra, India
Cell : 9595 359 435, Ph No: 02172372010 Email: ayisrj@yahoo.in Website: www.isrj.org

ISSN: 2230-7850 Impact Factor :4.1625(UIF) Volume - 6 | Issue - 9 | October - 2016

Indian Streams Research Journal

"आदिवासी विकास कार्यक्रमों का जनजातीय पर्यावरण पर प्रभाव नारायणपुर (अबुझमाड़) (छत्तीसगढ़) के विशेष संदर्भ में"

सखाराम कुंजाम
सहायक प्राध्यापक भूगोल
शास0 स्वामी आत्मानंद स्नातकोत्तर महा. नारायणपुर (छत्तीसगढ़)

शोध सारांश

प्रस्तुत शोध छत्तीसगढ़ प्रदेषके बस्तर जिले के बीहड़ जंगल, प्रकृति की अमूल्य निधि प्राकृतिक सम्पदा है। वहाँ विचरण करने वाली जनजातियां हैं, जिन्हें वनवासी वा आदिवासी के नाम से सम्बोधित किया जाता है। ये प्रकृति के सच्चे उपासक हैं, ये प्रकृति की गोद में, प्रकृति के प्रति असीम आस्था का विश्वास का स्वरूप, जगह–जगह दिखाई पड़ता है। जिला नारायणपुर जो बस्तर का अभिन्न अंग है, जिसे सन् 2007 में जिला का दर्जा प्राप्त हुआ है। नारायणपुर में ओरछा विकाखण्ड में 'अबूझमाड़' विशेष आकर्षण का केन्द्र है। जहाँ प्रकृति के प्रति आस्था को संजोये हुए जंगली जनजातियों बीहड़ जंगल में निवास करती हैं। सूर्य उदय होते विचरण करते हुए मिलेंगे तथा सूर्यास्त होते ही अपने निवास स्थान में पहुंच जाते हैं। इनके दैनिक दिनचर्या में केवल एक दिन का भरण पोषण, कन्द मूल, शहद, फल फूल तथा शिकार का संग्रहण करते हुए दिखाई पड़ेंगे। ये स्वभाव से अति सरल, मृदु भाषी होते हैं। ये इमली के पेड़ के नीचे चार घास की झोपड़ी बनाकर अथवा पक्षियों की भांति पेड़ों के नीचे ही 'नीड़' अस्थायी निवास बनाते हैं। महिला एवं पुरुषों के वस्त्र में कोई खास अन्तर नहीं होता है। यहाँ आवागमन परिवहन का कोई साधन नहीं है। ये प्रकृति की गोद में जंगली जानवरों की भांति विचरण करते हुए दिखाई पड़ते हैं। इनमें आधुनिक वैज्ञानिक–भौतिकवाद का प्रभाव बिलकुल नहीं है।

मुख्य शब्द रू. प्राकृतिक सम्पदा,आदिवासी विकास कार्यक्रम, जनजातीय पर्यावरण पर प्रभाव, नारायणपुर (अबुझमाड़) छत्तीसगढ़।

परिचय

जनजातीय समाज आज भी प्रकृति के अति निकट है। विश्व की 30 करोड़ जनसंख्या इन्हीं वन्य जातियों की है, वर्तमान भारत में 6.77 करोड़ जन जातियाँ आवासित हैं जो देश की कुल जनसंख्या का 8.01 प्रतिशत है। छत्तीसगढ़ की 30.62 प्रतिशत जनसंख्या सन् 2011 की जनगणनानुसार इस वर्ग में आती है। भारतीय संविधान की धारा 342 के अन्तर्गत इन्हें मान्यता देकर विशेष दर्जा प्रदान किया गया है। कठिन भौगोलिक परिस्थितियों में रहने एवं परिवहन के सीमित सुविधाओं के कारण जनजातियों का सम्पर्क देश के अन्य भागों से नहीं रहा। वे अपने वातावरण में अलग ही आत्म निर्भर होती रही तथा बाहरी दुनिया से उनका कोई जीवन्त सम्पर्क नहीं रहा। प्राचीन एवं परम्परागत संस्कृति एवं आर्थिक क्रियाकलाप उनकी विशेषता है। छत्तीसगढ़ में कुल 42 जनजातियाँ हैं, जो दूरस्थ अंचलों में फैली हुई हैं। आर्थिक दृष्टि से ये पिछड़ी जातियाँ अपने भोजन, वस्त्र, आवास, उद्यम, उपकरण प्रकृति से प्राप्त करती हैं। इनके निवास स्थल सघन वन घास के मैदान, ऊबड़ खाबड़ भूमि तथा नगरों के उपान्त क्षेत्र होती है, जो लघु समूहों में अस्थायी झोपड़ों में रहते हैं। ये भारत के मूल निवासी अपने भैतिक पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी से समायोजन कर अपने जीवन को संचालित करते हैं जैव एवं अजैव की यह परस्पर क्रिया पारिस्थितिकी की तंत्र कही जाती है। वर्तमान में सभ्य समाज के सम्पर्क से इनके इनके पर्यावरण में उपलब्ध भौतिक सम्पदा संसाधन बन गई है। शासन की सहायता के बाद भी ये आपदाओं से आक्रांत है। जनजाति पारिस्थितिकी में उपलब्ध संसाधनों का कैसे उपयोग करें कि संसाधनों का अधिकतम उपयोग तो हो पर ह्रास न हो। वर्तमान में जनजाति समाज में उभरी समस्याओं को उनके भौगोलिक परिवेश एवं पारिस्थितिकी के अनुरूप नियोजन प्रस्तुत करना तथा जनजाति पारिस्थितिकी तंत्र व्यवस्था में दशक में आदिवासी विकास कार्यक्रमों का जनजातीय पर्यावरण पर प्रभाव पाये जाने वाले परिवर्तनों को उद्घाटित करना प्रस्तुत शोध कार्य का मुख्य लक्ष्य है।

छत्तीसगढ़ में देश की सर्वाधिक जनजाति जनसंख्या निवास करती है। भारतीय संविधान की धारा 342 के अन्तर्गत अनुसूचित जनजातियों को मान्यता देकर उनके संरक्षण हेतु आवास, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं शासकीय सेवाओं में विशेष आरक्षण का प्रावधान किया गया है। प्रति वर्ष केन्द्रीय सरकार करोड़ों रुपये उनके पारिस्थितिकी संरक्षण एवं संवर्द्धन हेतु खर्च करती है, किन्तु उनके परिस्थितिकी के अनुरूप संसाधनों का प्रबंधन किया जाता तो जनजाति संस्कृति नष्ट न होती तथा जनजाति

पारिस्थितिकी निकेत में विद्यमान संसाधनों को अतिशोषण एवं ह्रास होने से संरक्षित किया जा सकता था। जनजाति पारिस्थितिकी निकेत का संरक्षण एवं वहां पाये जाने वाले संसाधनों का उपयोग एवं सम्बर्द्धन की आपूर्ति में जनजातियों की सहभागिता आवश्यक है, यह भी शोध का लक्ष्य है।

(अ) जनजाति पारिस्थितिकी –

संकल्पनात्मक पक्ष के अनुसार – पारिस्थितिकी में पाये जाने वाले जीवों तथा उनके पर्यावरण के अन्तर्सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है, यह शब्द यूनानी भाषा के ओईकोश शब्द से बना है। जिसका अर्थ निवास स्थल है, जो पर्यावरण तथा प्राकृति के प्रयत्नों का समुच्चय है दूसरे शब्दों में तरह–तरह के जीव प्रकृति में कैसे रहते हैं और एक दूसरे पर उनका क्या असर होता है। इसी अध्ययन को पारिस्थितिकी कहते हैं। किसी समुदाय के निर्जीव भौतिक वातावरण या उसके पाये जाने वाले प्राणियों के वर्ग को पारिस्थितिकी तंत्र कहते हैं।

पारिस्थितिकी विज्ञान का महत्व –आज के वैज्ञानिक युग में पारिस्थितिकी ज्ञान मानव जाति के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि मानव स्वयं भी एक जीवधारी है। मानव अपनी सभी प्राथमिक आवश्यकताओं जैसे भोजन, कपड़े, दवाओं आदि के लिए सदैव अपने वातावरण के विभिन्न जीवधारियों और अजैविक घटकों पर निर्भर रहते हैं। मनुष्य की सम्पूर्ण शरीर रचना व कार्सिकी पर पारिस्थितिकी का पूर्ण ज्ञान होना आवश्यक है। जनजातियाँ एवं मानव समाज का कल्याण और आर्थिक समस्याओं का समाधान पारिस्थितिकी के ज्ञान से संभव है। मनुष्य अपनी स्वयं समस्या का समाधान करना चाहता है। इसके लिए वह प्रकृति पर निर्भर है। जिससे हमारी प्राकृतिक संसाधन नष्ट होते जा रहे हैं। अतः पारिस्थितिकी ज्ञान द्वारा प्राकृतिक संसाधनों को नष्ट किये बिना हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति कैसे हो? यह प्रयास किया जाता है। वह उत्पादन एवं संरक्षण पारिस्थितिकी के उचित ज्ञान से सम्भव होता है, विज्ञान के बढ़ते कदमों के फलस्वरूप कुछ ऐसे पदार्थ का भी निर्माण होता जा रहा है जिससे हमारा वातावरण धीरे–धीरे प्रदूषित होता जा रहा है। प्रदूषित वातावरण का मानव और सभी जीव जन्तुओं पर प्रभाव पड़ रहा है। कुछ जीव जन्तुओं की स्पेसीज विलुप्त होती जा रही है उनमें अबूझमाड़ की जनजातियाँ भी महत्वपूर्ण हैं, मानव में गम्भीर रोग उत्पन्न हो रहे हैं। अतः इन समस्याओं का समाधान पर्यावरण प्रदूषण, जीव विज्ञान और रासायनिक पारिस्थितिकी के माध्यम से समाधान संभव है।

1. विकास परियोजना एवं जनजाति –

प्रस्तुत शोध में आदिवासी विकास कार्यक्रमों का जनजातीय पर्यावरण पर प्रभाव जिला नारायणपुर सम्भाग के आदिम जनजाति अबूझमाड़ छत्तीसगढ़ के विशेष संदर्भ में विकास परियोजना को शोध के रूप में चयन किया गया है। जिसमें (अबूझ माड़) छत्तीसगढ़ समाहित है। उक्त भूखण्ड जनजाति बहुल क्षेत्र है, जो भारत के आजादी के पूर्व तथा स्वतंत्रता के पश्चात भी उपेक्षित अवस्था में है। बस्तर सम्भाग का अबूझमाड़ लगभग 1930 से सामान्य प्रशासनिक व्यवस्था के बाहर रखा गया है। 1930 के बाद भी इस क्षेत्र की दुर्गमता के कारण बाहरी सम्पर्क नगण्य रहा है। स्वतंत्रता के पश्चात इस क्षेत्र में विकास के लिए समय–समय प्रयास हुए हैं, विचार मंथन भी किये गये किन्तु स्पष्ट कार्यनीति नहीं उभरी है। सन् 1965 में यहां पर आदिवासी विकास खण्ड कार्यक्रम चालू किया गया, जिसे विभाग परियोजना के रूप में शासन द्वारा मूर्तरूप देने का प्रयास किया गया। इसी वर्ष नीति स्तर पर इस क्षेत्र में विस्तार अधिकारियों को जाने की अनुमति दी गई। किन्तु आदिवासी विकास खण्ड के अन्तर्गत कार्यक्रम सामान्य ही रहे हैं। उनका रूप भी वही है। जैसा अन्य प्रगत क्षेत्रों में। सन् 1970 में दस आश्रम शालाएँ विशेष रूप से अवश्य स्थापित की गईं। वर्तमान में आश्रम शालाओं के सीमित प्रभाव को छोड़कर विकास कार्यक्रमों का कोई खास प्रभाव तंत्र नजर नहीं आता है। स्वास्थ्य सेवाओं का लाभ विकास खण्ड मुख्यालय से बाहर नहीं पहुंचा है। प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र विकास खण्ड के एक कोने पर स्थित है। थोड़े समय के लिए कभी–कभी कुछ विशेष लाभ इस क्षेत्र को नहीं मिलता है। यहाँ परिवार नियोजन परिसर की स्थापना हो गयी है। सर्वाधिक विरल आबादी वाले क्षेत्र में, जबकि प्राकृतिक संसाधन विपुल हैं। जिसकी आबादी बहुत समय से लगभग स्थिर है। समूची नियोजन व्यवस्था और उसकी कार्य नीति पर एक गम्भीर प्रश्न वाचक चिन्ह के रूप में अवस्थित है। यहां डाहिया वा बेवर खेती की प्रधानता है। स्थिर खेती के लिए कोई खास उत्सुकता नहीं है। कृषि विस्तार का सामान्य कार्यक्रम भी बैलों के विवरण अथवा साग–सब्जी के बीज देने तक ही सीमित है। विकास के लिए दीर्घ कालीन कार्यनीति प्रस्तुत नहीं की गयी है। सहकारी भण्डारण के माध्यम से आवश्यक वस्तुओं की खरीद फरोक्त का प्रयास किया गया था, किन्तु उसका क्रियान्वयन खास कारगर नहीं रहा। अतः आदिवासियों को अभी अपने क्षेत्र के चारों ओर लगने वाले साप्ताहिक बाजारों पर ही अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए निर्भर रहना पड़ रहा है। एक तरह से यह पूरा अंचल उसकी प्राकृतिक सम्पदा के दोहन तथा राज्य के द्वारा विकास प्रयास, दोनों ही सन्दर्भों में, नितान्त अछूता रहता है। सबसे पहले इस क्षेत्र के लिए विकास के तथ्यों को स्पष्ट रूप में परिभाषित करना आवश्यक होगा। इसमें दो विकल्प हैं –

(1) क्षेत्रीय विकास (अबूझमाड़ क्षेत्र) नारायणपुर जिला का विकास तथा
(2) जन विकास (अबूझमाड़ का विकास) या जनजाति का विकास।

आदिवासी विभाग को लेकर बुनियादी तौर पर दो धारणाएँ चलती हैं –

(1) यह कि आदिवासी भाइयों को जीवन शैली में कोई बाहरी हस्तक्षेप न किये जाय और उन्हें उनके पर्यावरण में जैसा का तैसा रहने दिया जाय।
(2) दूसरी धारणा यह है कि आदिवासी क्षेत्रों में उसी तरह विकास किया जाय, कि जिस तरह अन्य क्षेत्रों में किया जाता है और आदिवासियों को तेजी से विकास की धारा में जोड़ा जाय। हमारा यह विचार है कि दोनों धारणाओं को एक का समन्वित शैली का विकास किया जाय।

कई लोग नृवंश–शास्त्र (Anthropology) को प्रेम के कारण वनवासी जनजातियों के जीवन का अध्ययन करते हैं। परन्तु जिज्ञासा का अर्थ प्रेम नहीं है। बहुत से नृवंश–शास्त्री जनजातियों को अपने उपयोग का अजायव घर समझते हैं। जिस प्रकार मेडिकल कालेज के संलग्न अस्पताल में रोगी अपनी मृत्यु के कारण मरता है और डाक्टर (Very interesting case) कहकर अपने शिष्यों को उसे देखने के लिए लाता है, उसी प्रकार कुश अंशों में यह स्थिति है। ऐसे नृवंश शास्त्रियों को यही लगता है कि वनवासी जैसे हैं, वैसे ही रहे उन्हें यही चिन्ता रहती है कि यदि वे सुधर गयें और संस्कारक्षम होकर जीवन संग्राम में सारे संसार में विजयी हो गये, तो इनके अजय घर का नाम हो जायगा। फिर वे नृवंश शास्त्र के विद्वान उनकी सेवा अच्छी तरह कर सकते हैं।

विकास एक सतत प्रक्रिया है, जनजातियों का विकास पारिस्थितिकी के अन्तर्सम्बन्धों पर निर्भर है। भारत की आदिम जनजातियों को विद्वानों ने अलग–अलग नामों से पुकारा है। प्रसिद्ध नेतृत्व शास्त्री एच.एच. रिजले, लेके, ग्रिगसन, सोलंर्ट, ट्रेलेट्रस सेनविक, मार्टिन तथा भारतीय समाज सुधारक ठक्कर ने इन्हें आदिवासी शब्द से सम्बोधित किया है। हट्टन ने इन्हें ''प्राचीन जनजाति (Primitive Tribe) कहा है। एल्विन ने बैगा जनजाति को आदिस्वामी (Aboriginals) कहा है। बेन्स ने इन्हें वन्य (Jungle People, Forest Tribes or Folk) जाति कहा है। 1921 से लेकर विभिन्न जनगणनाओं में भिन्नता है। इस समुदाय के सामाजिक स्तर के अनुसार कई प्रकार हैं जैसे प्राचीन जनजाति (Primitive Tribe), प्राचीन जनजाति

अथवा आदि स्वामी (Primitive Tribe or Oboriginal), आदिम जनजाति (Aborginal Tribe) आदि और पहाड़ी जनजाति (Oboriginal and Hill Tribe) जंगली तथा पहाड़ी जनजाति (Indigenous Tribe) आदिवासी, जंगली तथा जिप्सी जनजाति (Forest and Gypsyu Tribe), पिछड़ी जनजाति (Backward Tribe), अपराधिक जनजाति (Criminal Tribe), विधिक एवं अपराधिक जनजाति (ndering an Criminal Tribe) जनजाति आदि।

इम्पीरियल गजेटियर (Immperial Gazetteer) में जनजाति शब्द का अर्थ इस प्रकार स्पष्ट किया गया है। ''जनजाति परिवारों के एक ऐसे समूह का नाम है, जिसका एक नाम तथा एक बोली हो तथा एक ही भू–भाग में रहते हैं या उस भाग को अपना मानते हो तथा अपनी जनजाति के भीतर की विवाह इत्यादि करते हो।'' मजूमदार के अनुसार ''कोई जनजाति परिवारों तथा पारिवारिक वर्गों का एक ऐसा समुह है, जिसका सामान्य नाम है, जिनके सदस्य एक निश्चित भू–भाग पर निवास करते हैं तथा विवाह, व्यवसाय के विषयों में कुछ निषेधाज्ञाओं का पालन करते हैं, जिन्होंने आदान–प्रदान सम्बन्धी तथा पारस्परिक कर्त्तव्य विषय एक निश्चित व्यवस्था का विकास कर लिया हो।'' बोआम के अनुसार– ''जनजाति का अर्थ आर्थिक दृष्टि से ऐसा स्वतंत्र जन समूह जो एक भाषा बोलता है और बाह्य आक्रमण से सुरक्षा के लिए संगठित होता है।'' मर्डोक ने जनजाति को इस प्रकार परिभाषित किया है – ''यह एक सामाजिक समूह है जिसकी एक अलग भाषा होती है तथा भिन्न संस्कृति एवं एक स्वतंत्र राजनैतिक संगठन होता है।''

भारत के संविधान के अनुच्छेद उपखण्ड एक में इस प्रकार स्वीकार किया गया है। ''राष्ट्रपति सार्वजनिक सूचना द्वारा जनजातियों, जनजाति समुदायों या जनजाति समुदाय के भीतरी समूहों की घोषणा करेंगे। इस सूचना में जो जनजाति समुदाय या जनजातियों के भीतरी समूह परिगणित किए जायेंगे, वे सब अनुसूचित जनजाति (Sheduled Tribe) कहलाएंगे।'' इस प्रकार जनजाति के सम्बन्ध में विद्वानों में परस्पर सहमति नहीं है तथा उन्होंने अपने–अपने विचार प्रकट किए हैं। भारत के संविधान के 16 वें भाग में जनसंख्या के कुछ विशेष वर्गों का उल्लेख किया गया है। इस अनुच्छेद की धारा 330 में अविशेष वर्गों को नामांकित किया गया है, जिनके सम्बन्ध में इस अनुच्छेद में कुछ विशेष सुविधाओं की व्यवस्था की गई है। इसी अनुच्छेद की उपरोक्त धारा के अनुसार– ''राष्ट्रपति को यह अधिकार है कि समय–समय पर आदिम जातियों अथवा आदिम समुदायों अथवा इनके कुछ वर्गों अथवा समूहों को अनुसूचित घोषित करें तथा संविधान के उद्देशों के लिए इसी घोषणा के आधार पर उन्हें अनुसूचित आदिम जातियाँ कहा जाएगा। इस प्रकार राष्ट्रपति द्वारा घोषित अनुसूचित आदिम जातियों में कुल 14 राज्यों में 212 जनजातियों को 'अनुसूचित जनजाति' घोषित किया गया है। स्थानीय पूर्व शिक्षित समूहों के किसी भी समुदाय को जो एक सामान्य क्षेत्र में रहता है, एक सामान्य भाषा बोलता है और सामान्य संस्कृति को प्रयोग में लाता है, एक जनजाति कहते हैं। साधारणतया लोग ''जनजाति'' अथवा ''आदिवासी'' शब्द का तात्पर्य ''पिछड़े हुए और असभ्य मानव समूह'' से समझते हैं। ऐसा माना जाता है कि जनजातियों के लोग देश की जनसंख्या के प्राचीनतम मानव समुदाय का प्रतिनिधित्व करते हैं।

नृविज्ञानी विद्यार्थी (1963) में 'मालेर' अर्थव्यवस्था का अध्ययन करते हुए जन जाति अर्थ स्यवस्था, पारिस्थितिकी की मूल भूत विशेषताओं की व्याख्या निम्नलिखित तथ्यों के आधार में की है –

1. वन पर निर्भर अर्थव्यवस्था पारिस्थितिकी उनकी अर्थ व्यवस्था वनों के चारों ओर घूमती रहती है। गृह निर्माण से लेकर खाद्य पदार्थ तक वनों से प्राप्त करते हैं।
2. परिवार पारिस्थितिकी जनजाति अर्थव्यवस्था में परिवार पारिस्थितिकी उत्पादकता की इकाई है। श्रम विभाजन परिवार के सदस्यों में उम्र के अनुसार किया जाता है। कार्य का विभाजन घर के मुखिया द्वारा किया जाता है। उत्पादन में विक्रय एवं संचय की प्रवृत्ति नहीं होती है। उत्पादन जीवन यापन के लिए किया जाता है, धन लाभ के लिए नहीं।
3. सरल तकनीकी – प्राकृतिक दोहन की जनजाति विधि अत्यन्त परिष्कृत है। व्यवहार में लाये गये उपकरण स्चनिर्मित एवं परिष्कृत होते हैं।
4. आर्थिक व्यवहार पारिस्थितिकी मुख्य वृत्ति का अभाव।
5. समुदाय एवं सहकारी पारिस्थितिकी इकाई है। किसी वस्तु की कमी होने पर सर्व प्रथम नातेदारी से प्राप्त किया जाता है। कृषि कार्य, गृह निर्माण, पशु चारण, मिट्टी खोदना आदि कार्य जनजातियाँ मिल–जुल कर एक साथ करती है।
6. उपहार तथा उत्सव विनिमय पारिस्थितिकी यह तीन रूपों में होता है –

(क) साधारण आदान–प्रदान
(ख) समान आदान–प्रदान
(ग) नकारात्मक आदान–प्रदान

साधारण आदान–प्रदान –छत्तीसगढ़ में माड़िया, मुड़िया, अबूझमाड़िया, भतरा, कमार, कोरवा,, गोड़, बैगा, पनिका, पलिया, खेतवाने, फसल की गहाई करने में जानवरों का आदान प्रदान करते हैं। तथा फसल कटाई, गृह निर्माण में श्रम का आदान–प्रदान करते हैं। इसे बदलिया कहते हैं।

सामान आदान–प्रदान –सामान का आदान–प्रदान भी जन जातियों में प्रचलित है। माड़िया, अबूझमाड़िया, गोड़, परजा, भील, बैगा जनजाति से अनाज के बदले बांस से बनी टोकरी एवं अन्य कघरू उपयोग की वस्तुएँ प्राप्त करते हैं।

नकारात्मक आदान–प्रदान –नकारात्मक आदान–प्रदान का अर्थ बिना कुछ दिये पाने की बात होती है। इस प्रकार का आदान–प्रदान जनजातियों में नहीं पाया जाता है।

7. निश्चित अन्तराल बाजार–छत्तीसगढ़ में जनजाति समुदाय निश्चित समय अन्तराल में परम्परागत स्थान में बाजार लगाते हैं। जिन्हें मड़ई, हाट यह जन जातियों में सांस्कृतिक परिवर्तन का माध्यम है।
8. परस्पर निर्भरता पारिस्थितिकी – जन जातियों में कार्यात्मक सम्बन्ध यथा एक ही जन जाति के लोगों में, दूसरी जन जाति के साथ, बाहरी जातियों के पक्ष परस्पर निर्भरता का सम्बन्ध पाया जाता है।उदाहरणार्थ छत्तीसगढ़ में अगरिया जाति, लोहारगीरी, लोहे के कार्य जिसमें हंसिया, खुरपी, हल की फार आदि बनाता है। पनिका लकड़ी से हल, कुदारी का बेंट आदि बनाता है, बैगा बांस के टोकरी, चटाई, मूंज घास से चारपाई का बन्धना बनाता है। खैरवार जंगल में खैर के वृक्ष से कथ्था बनाता है। ये जन जातियाँ आपस में परस्पर एक दूसरे को एक वस्तु के बदले दूसरी वस्तु प्राप्त करते हैं। जिनके पास कोई सामान नहीं होता है वे जंगली वस्तुओं से प्राप्त संग्रह या अनाज के बदले आवश्यक सामग्री प्राप्त करते हैं।

(ब) जनजाति अर्थव्यवस्था एवं पारिस्थितिकी का अन्तर्सम्बन्ध –

पारिस्थितिकी आधुनिक दृष्टिकोण के अनुसार प्राकृतिक एवं सामाजिक विज्ञानों के मिलन स्थलों पर विकसित एक विज्ञान है जिनके पारिस्थितिकी वैज्ञानिक चिन्तन का विशेष महत्व है। पारिस्थितिकी विज्ञान पारिस्थितिकी का केवल एक ही वैज्ञानिक विषय के रूप में नहीं लेता, बल्कि एक ऐसे दृष्टिकोण में लेता है जिसका जीवन एवं पर्यावरण को प्रभावित करने वाली प्रत्येक वस्तु का, जिसमें मानव समाज एवं उसके कार्य सम्मिलित हैं जैसे कि आरेख क्रमांक 1.1 से स्पष्ट है।

जनजाति अर्थ व्यवस्था समाज एवं पारिस्थितिकी का अन्तर्गसंबंध

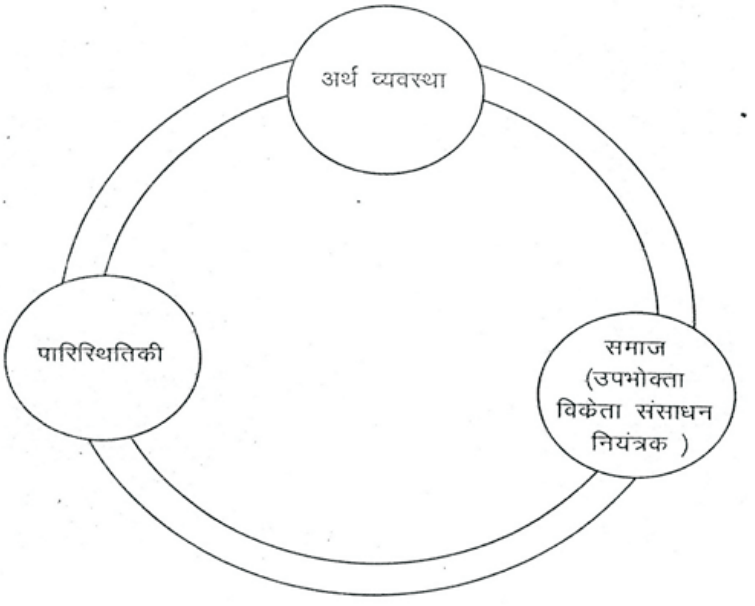

आरेख क्रमांक 1.1

वान डाइन तथा इन्निस महोदय ने पारिस्थितिकी की व्यवस्था के गुणों मानवीय अस्तित्व का निर्धारण तथा सामाजिक व्यवस्था के मध्य अर्न्तसम्बन्ध एवं प्राकृतिक निर्भरता को निम्न प्रकार से प्रस्तुत किया है –

पारिस्थितिकी व्यवस्था के गुण	मानवीय अस्तित्व
सामाजिक व्यवस्था (वायु, जल, ऊर्जा	खाद्य खनिज का निर्धारण तथामूल्य
सांस्कृतिक संसाधन	व्यवस्था सामाजिक संगठन
स्थानिक वितरण	ऊर्जा, जल, वायु, खनिज

किसी क्षेत्र या छत्तीसगढ़ नारायणपुर जिला का पारिस्थितिकी विकास वहाँ के सामाजिक, आर्थिक आधार पर ही निर्भर करता है। अर्थव्यवस्था समाज एवं पारिस्थितिकी का अर्न्तसम्बन्ध है (आरेख क्रमांक 1.2) –

पारिस्थितिकी एवं जनजाति सामाजिक आर्थिक व्यवस्था के मध्य विस्तृत सम्बन्ध

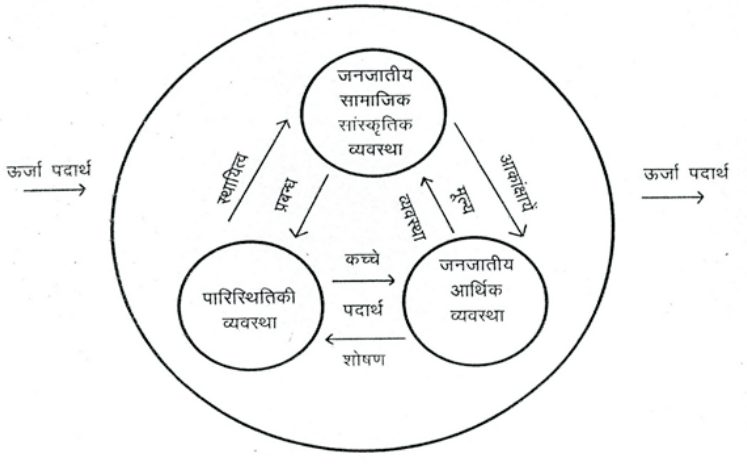

आरेख क्रमांक 1.2

पारिस्थितिकी एवं जनजाति सामाजिक आर्थिक व्यवस्था के मध्य विस्तृत सम्बन्ध हैं। पारिस्थितिकी के स्थायित्व एवं प्रबंधन तथा नियोजन पर

ही जनजाति जीवन सामाजिक, सांस्कृतिक व्यवस्था तथा उसका आर्थिक विकास सम्भव है। स्थानीय संसाधनों कच्चे माल पदार्थों की आपूर्ति एवं उनका उचित मूल्य जनजातियों को प्राप्त हो, यह समुचित व्यवस्था एवं प्रबंधन पर अभिलम्बित है। जैसा कि रेखाचित्र क्रमांक 1.3 से स्पष्ट है। पर्यावरण पारिस्थितिकी विकास पर्यावरण प्रक्रिया तथा पर्यावरणीय भू–दृश्यों के अंतः क्रिया जनित तत्व पर आधारित है जैसा कि निम्न आरेख से स्पष्ट है।33

पर्यावरण पारिथितिकी

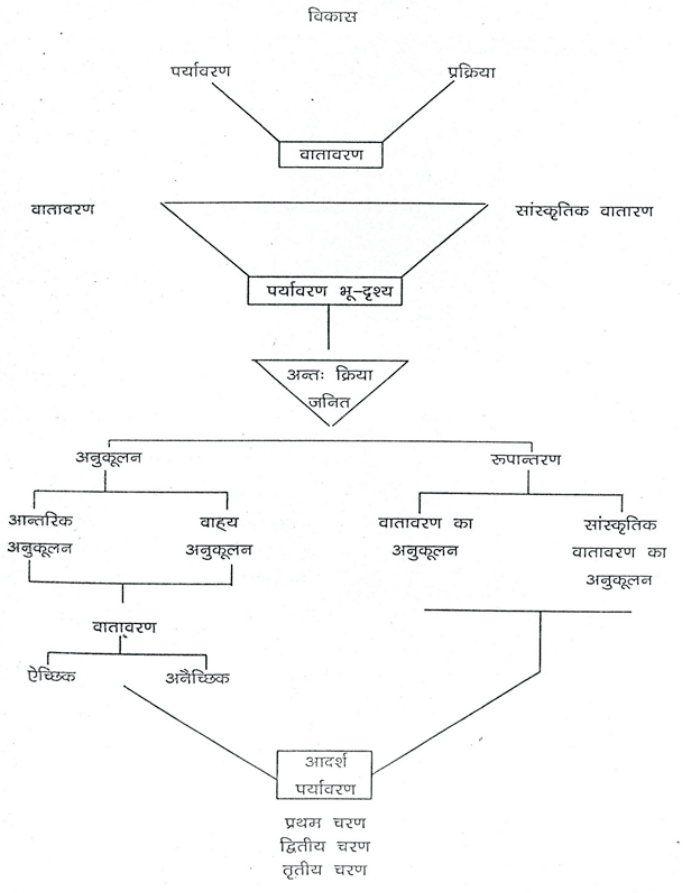

रेखाचित्र क्रमांक 1.3

पारिस्थितिकी अनुकूलन –

वर्तमान समय में जिस विकसित रूप में पर्यावरण को देखा जा रहा है, वह मनुष्य की अद्भुत अनुकूलन एवं समायोजन के क्षमताओं का परिणाम है। चार्ल्स डारविन ने अपनी पुस्तक ओरिजिन आफ स्पेसीज में विकास के महत्वपूर्ण तत्वों को दर्शाते हुए स्पष्ट किया है कि सभी जीवों काक विकास इसी पृथ्वी तल पर अपने आपको स्थापित करने के लिए कई प्रकार के अनुकूलन करने पड़े, जिन प्राणियों ने प्रकृति के साथ भली भांति अनुकूलन कर लिया है उनकी प्रजातियाँ पूर्ण विकसित हुईं, जबकि जो जीव ढंग से प्रकृति के साथ अनुकूलन नहीं कर पाये वे समय से पूर्व ही विलुप्त हो गये। कोई भी जीव या मनुष्य सर्व प्रथम प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित करने के लिए उसके अनुकूल होने का प्रयास करता है। तदुपरान्त वह धीरे–धीरे प्रकृति से परिवर्तन करने लगता है। अतः अनुकूलन की प्रक्रिया धरातल पर जीवन को बनाये रखने वाली एक चाभी है जो उसे विकसित होने का निरंतर अवसर प्रदान करती है। सामान्यतः अनुकूलन कई प्रकार का होता है। आज के लाखों वर्ष से मानव जीव जन्तु अनुकूलन करते आ रहे हैं। तत्वों पर आधारित जनजाति का अनुकूलन निम्न प्रकार से हुआ है –

1.आकारकी अनुकूलन (Morphological Adaptation)

2.शारीरिक अनुकूलन (Anotonical Adaptation)

3.अनुवांशिक अनुकूलन (Genetical Adaptation)

4.मनोवैज्ञानिक अनुकूलन (Shychological Adaptation)

5.भौगोलिक अनुकूलन (Geographical Adaptation)

जनजाति अनुकूलन की प्रक्रिया के माध्यम से पर्यावरण परिवर्तन का प्रकृति के साथ सामंजस्य करती जाती है और जो जातियाँ प्रकृति के साथ अनुकूलन करने में सक्षम नहीं है वह विनष्ट हो गयी, मनुष्य अन्य जीवों की तुलना में अनुकूलन प्रक्रिया करने में अधिक सक्षम होता है। इसलिए धरातल पर शक्तिशाली जीव के रूप में प्रतिष्ठित हुआ। मनुष्य की अनुकूलन की प्रक्रिया दो तरह की होती है –

1.अल्पकालीन अनुकूलन (Shortterm Adaptation)

2.दीर्घकालीन अनुकूलन (Longterm Adaptation)

जनजाति जीवन पारिस्थितिकी के अनुकूल अपना जीवन निर्वहन कर रहे हैं। किन्तु समाज के ठेका लेने वाले सभ्य कहे जाने वाली जातियां

तकनीक परिवर्तन कर पर्यावरण को विनष्ट किया है। जिन–जिन क्षेत्रों में तकनीकी परिवर्तन हुए हैं उनमें कई प्राकृतिक समस्यायें उत्पन्न हो गयी हैं। उन समस्याओं के हल के लिए जिस शाखा का जन्म हुआ उसे पारिस्थितिकी विज्ञान कहते हैं। पारिस्थितिकी विज्ञान प्रत्येक समस्या का जैविक हल है, जो पूर्णतया प्राकृतिक है।

2. अध्ययन क्षेत्र का परिचय –

छत्तीसगढ़ प्रदेश में आवासित जनजातियाँ मुख्य रूप से नारायणपुर जिला की आदिवासी विभाग कार्यक्रमों का जन्जातीय पर्यावरण पर प्रभाव का प्रस्तुत शोध परियोजना का अध्ययन क्षेत्र निरूपित किया गया है। नारायणपुर जिला की जनजाति पर्यावरण प्रभाव को पारिस्थितिकी निकेत में विभक्त कर अध्ययन किया गया है। जनजाति पारिस्थितिकी निकेत में अध्ययन भौगोलिक सीमा के अन्तर्गत आता है। अतः शोध प्रबंध अन्तर्गत भौगोलिक तत्वों, धारातलीय संरचना, जनसंख्या उद्यम, कृषि तकनीकी, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि के प्रभावों का उल्लेख किया गया है। शोध प्रबंध में छत्तीसगढ़ के जनजाति पारिस्थितिकी के अध्ययन की दृष्टि से तहसील/विकासखण्ड को आधार मानकर किया गया है। जिसमें पर्यावरणीय पारिस्थितिकी तंत्र के प्रभावों का विश्लेषणात्मक अध्ययन तथा वर्तमान बदलते परिवेश के कारण जिला नारायणपुर के जनजातियों में सृजनात्मक परिवर्तनों का समग्र अध्ययन शोध प्रबन्ध में समाहित करने की योजना है।

3.अध्ययन का उद्देश्य –

जनजाति पारिस्थितिकी के अध्ययन का मुख्य लक्ष्य एवं उद्देश्य इस प्रकार हैं –

1. जनजातियों में पर्यावरण के प्रति चेतना जागृत करना एवं उसके अनुकूल दैनिक जीवन के आचरण को ढालना।
2. जनजातियों के आर्थिक स्तर को ऊपर उठाना।
3. जनजातियों में अन्धविश्वास को दूर करना तथा पौधों की पारिस्थितिकी (वैज्ञानिक क्रिया) के अनुकूल आचरण का विकास करना।
4. सामाजिक शोषण से मुक्त करना है।
5. राष्ट्रीय विकास की मुख्य धारा से जोड़ना है।
6. जनजातियों में शिक्षा का विकास करना है।
7. पर्यावरण संतुलन को बनाये रखना है।
8. जनजातियों को कुपोषण से बचाना है।
9. जनजाति आवासित क्षेत्रों में यातायात के साधनों का विकास करना है।
10. जनाजातियों को शासन की विविध योजनाओं से अवगत करना है।
11. उन्नतशील जनजातियों की श्रेणी में लाना है।
12. जनजाति क्षेत्र में स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार एवं परिवार नियोजन कार्य को प्रोत्साहन देना है।

4. शोध प्रविधि –

शोध को व्यावहारिक स्वरूप प्रदान करने के लिए निम्नांकित विधियों का समावेश किया गया है –

1. साक्षात्कार विधि
2. सर्वेक्षण एवं निरीक्षण विधि
3. अनुभावित विधि
4. वर्णात्मक विधि।

संकल्पनात्मक स्वरूप –

संकल्पनात्मक स्वरूप के अन्तर्गत अमेरिका के पर्यावरणीय विज्ञान के विश्व कोष (Encyclopedia of Environment Science) के द्वारा प्रस्तुत पारिस्थितिकी शब्द की संकल्पनाओं को समाहित किया गया है –

1. पारिस्थितिकी
2. व्यावहारिक पारिस्थितिकी
3. मानवीय पारिस्थितिकी
4. वैज्ञानिक क्रिया (पौधों की पारिस्थितिकी)

3.शोध परिकल्पनाएँ (Hypothisis of Naturalism)

(अ) प्रकृतिवाद की परिकल्पना (Hypothisis of Naturalism)

(ब) आदिम दृष्टिकोण (Tribal Concept)

(स) जीव सम्बन्धी विचारधारा (Organismicschool)

(द) पारिस्थितिकी तंत्र (Ecoystem)

4.आंकड़ों का स्वरूप एवं आधार –

इस अध्ययन के लिए उल्लेखित अधिकांश आंकड़े वर्ष 2001 से 2011 तथा अनुमानित 2021 तक को आधार मानकर आंकड़े प्राथमिक एवं गौण विधियों से प्राप्त किये गये हैं। इस अध्ययन के लिए अधिकांश छत्तीसगढ़ के बहुसंख्यक जनजाति आवासित जिला तथा विशेष रूप से नारायणपुर जिला के तहसील/विकासखण्ड स्तर पर आधारित आंकड़ों को संग्रहित किया गया है एवं उनका विश्लेषण किया गया है। जिला नारायणपुर के बहुसंख्यक जनजातियों का सर्वेक्षण कार्य योजना द्वारा अवलोकन एवं साक्षात्कार के माध्यम से आंकड़ों का संग्रह किया गया है। जिसमें रेण्डम मेथड/निदर्शन विधि से विभिन्न तथ्यों की जानकारी अनुसूची द्वारा प्राप्त की गयी है। अनुसूची के अन्तर्गत निम्न प्रकार की जानकारी उत्तरदाताओं से प्राप्त की गयी है –

1.अवलोकन सूची (सामान्य परिचयात्मक)

2.साक्षात्कार अनुसूची –

(क)सांस्कृतिक प्रतिस्थापना एवं पारिस्थितिकी निकेत एवं टोटमवाद
(ख)उद्यम पारिस्थितिकी, शिक्षा बाजार बैंकिंग, परिवहन
(ग)आर्थिक एवं सामाजिक पारिस्थितिकी
(घ)जनजाति पारिस्थितिकी की समस्यायें
(ड.) जनजाति पारिस्थितिकी विकास में जनजातियों का योगदान
(च)गौण विधि से प्राप्त आंकड़ें विभिन्न प्रकाशन

प्रतिवेदन और सम्बन्धित शासकीय विभाग से अभिलेख प्राप्त किये गये हैं। जनगणना कार्यालय, आदिम जाति कल्याण विभाग, सूचना प्रसारण विभाग, पुरातत्व संग्रहालय आदि से विस्तृत अभिलेख प्राप्त किये गये, इसके अतिरिक्त मानचित्र आरेख गणक (कम्प्यूटर) फोटोग्राफर का भी सहयोग लिया गया है।

5. अध्ययन की आवश्यकता, महत्व एवं सीमाएँ –

पारिस्थितिकी के सिद्धान्तों को समझकर तथ्य प्रकृति के अनुरूप कार्य करने से ही प्रकृति के साथ सामंजस्य की स्थिति उत्पन्न की जा सकती है। अन्यथा जनजातियों का अस्तित्व खतरे में पड़ सकता है। विज्ञान की अनेक शाखाओं के विनाशकारी प्रभावों को दूर करने के लिए केवल पारिस्थितिकी ही सक्षम है। क्योंकि यह एक बहुउद्देशीय संश्लेषित विज्ञान है। छत्तीसगढ़ जिले में बहुसंख्यक जनजातियाँ पाई जाती हैं। जो (आदिवासी) जनजाति पारिस्थितिकी भूखण्ड है। जहाँ सर्वाधिक गोड़, बैगा, भारिया, मुड़िया, भतरा, कोटवा जनजातियां निवास करती हैं। जिसे जनजाति प्रधान क्षेत्र के प्रतीक के रूप में माना गया है। यह प्राकृतिक संसाधनों से परिपूर्ण है, किन्तु प्राकृतिक पर्यावरण में निवास करने वाली जनजातियों का अस्तित्व संसाधनों के असीमित दोहन के विनास के कगार पर है। अतः जनजातियाँ पारिस्थितिकी का संरक्षण करना एक औचित्यपूर्ण प्रश्न है। जनजाति पारिस्थितिकी में उपलब्ध संसाधनों का कैसे उपयोग करें कि इन संसाधनों का अधिकतम उपयोग हो पर ह्रास न हो वर्तमान में जनजाति में उभरी समस्याओं को उनके भौगोलिक परिवेश में नियोजित ढंग से प्रस्तुत करना तथा संस्कृति भाषा लिपि तथा तत्व प्रथाओं, परम्पराओं का अध्ययन है। जनजाति समाज विशेष रूप से छत्तीसगढ़ के नारायणपुर जिला के विशेष संदर्भ में जनजाति पारिस्थितिकी की दृष्टि से स्वास्थ्य जीवन के लिए चार वर्गों में गणना की है। जो कि स्वास्थ्य के निर्धारण में महत्वपूर्ण है जो इस प्रकार है – (1) स्वास्थ्य, (2) पारिस्थितिकी, (3) सामाजिक सांस्कृतिक, (4) राजनीतिक।

पिछले 200 वर्षों में पर्यावरण के क्षेत्र में भूगोल वेत्ताओं द्वारा विस्तृत एवं महत्वपूर्ण कार्य किया गया है। इस सम्बन्ध में कान्ट हम्बोल्ट तथा रेटजल आदि जर्मन भूगोल वेत्ताओं द्वारा मानवीय जीवन की क्रियाओं पर वातावरण पारिस्थितिकी के प्रभाव को स्वीकार किया गया है। इन भूगोल वेत्ताओं ने पर्यावरण को प्रधानता दी है तथा पर्यावरण के अध्ययन में भौगोलिक स्थिति भू–संरचना उच्चावच जलवायु मिट्टियां, खनिज संसाधनों, प्राकृतिक वनस्पति और जन्तु वर्ग को सम्मिलित किया गया है। वर्तमान समय में पुनः भूगोल में इस प्रकृति को महत्व दिया जा रहा है जो जैव एवं अजैव का संगठन है, मानव का जीवन आश्रय प्राकृतिक व्यवस्था है यह प्राकृतिक व्यवस्था पांच तत्वों से बनीं है, इनका परस्पर सम्बन्ध है। (1) वायु, (2) जल, (3) भूमि, (4) जीव–जन्तु, (5) वनस्पतियाँ।

शोध प्रबंध की सीमाएँ –

आदिवासी विभाग कार्यक्रमों का जनजातीय पर्यावरण पर प्रभाव नारायणपुर (अबूझमाड़) छत्तीसगढ़ के विशेष सन्दर्भ में विगत 10 वर्षों में उभरे हुए परिवर्तनों को उद्घाटित करना, तथा शोध–प्रबंध में कार्य योजना के रूप में प्रस्तुतीकरण है।

विश्लेषण–

वर्तमान समय में बढ़ते औद्योगिक तीव्र विकास, जनसंख्या अभिवृद्धि का बढ़ता हुआ दबाव, संसाधन का सतत दोहन के कारण पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी संकट पैदा हो रहा है। पारिस्थितिकी समस्याओं के प्रमुख बिन्दु इस प्रकार है –

1. सामाजिक पारिस्थितिकी समस्यायें – अनैतिकता की समस्या, युवागृहों का पतन, अपहरण की समस्या।
2. जनजातीय सांस्कृतिक पारिस्थितिकी समस्यायें
3. जनजातीय धार्मिक परिस्थितिकी समस्यायें
4. परसंस्कृति ग्रहण से उत्पन्न समस्यायें।
5. स्वास्थ्य संरक्षण की समस्यायें – पोषण, कुपोषण की समस्यायें।
6. आर्थिक पारिस्थितिकी समस्यायें – जगलों के कटाव के कारण, ऋणग्रस्तता, गरीबी की समस्या, वनसम्बन्धी अधिनियम से उत्पन्न समस्यायें। परिवर्तन कृषि की समस्यायें।
7. आर्थिक पारिस्थितिकी समस्यायें।
8. शिक्षा सम्बन्धी समस्यायें।
9. खाद्यान्न पारिस्थितिकी समस्यायें।
10. नक्सलवाद की समस्यायें – नक्सलवाद के कारण जनजातियों में दो वर्ग तैयार हो गया है। आपस में फूट पड़ गयी है। पढ़े–लिखे लोग नक्सलवादियों का विरोध करते हैं। जिन्हें अबूझमाड़ से निष्काषित कर दिया गया है। 500 आदिवासी परिवार, नारायणपुर में – शान्ती नगर में आवासित किये गये हैं। दूसरा वर्ग अशिक्षित वर्ग है, जिनका नक्सलवादी शोषण कर रहे हैं।
12. जनजातीय आवास की समस्यायें।
13. दूरसंचार एवं पहुंच मार्गों के निर्माण की समस्यायें।
14. आवास पारिस्थितिकी की समस्यायें।
15. अलगाववाद की समस्यायें।
17. स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सम्बन्धी समस्यायें – हानिकारक मादक पदार्थों का सेवन, निर्धनता, बीमारी की समस्याएं।
18. धार्मिक समस्यायें – धर्मान्तरण।
19. इसाईकरण की समस्यायें।
20. पुर्नवास के कारण पर्यावरण समायोजन की समस्यायें

पारिस्थितिकी शोध चिंतन एवं विकास से सम्बन्धित दो महत्वपूर्ण समस्यायें हैं – (1) पारिस्थितिकी विकास (Ecological

Development), (2) जनजाति पारिस्थितिकी सम विकास (Tribal Eco-Development)। जनजाति पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी समस्यायें (संकट) पारिस्थितिकी असन्तुलन का परिणाम है। प्रकृति की प्रत्येक वस्तु जिसका पृथ्वी पर अस्तित्व है। अन्य वस्तुओं में अथवा एक दूसरे से परस्पर जुड़ी हुई है। किसी घटक में न्यूनतम अथवा प्रकृति के किसी एक घटक को बाधा पहुंचाई जाती है अथवा नष्ट किया जाता है तो प्रकृति के अन्य घटकों पर भी प्रभाव पड़ता है जिससे संकट की समस्यायें पैदा होती है, जिससे अनेक विनासकारी दुष्परिणाम परिलक्षित होते हैं।

नारायणपुर जिला के पर्यावरण पारिस्थितिकी संकट के प्रमुख कारण निम्नवत है –

1. औद्योगिक विकास
2. तीव्र गति से जनसंख्या वृद्धि
3. आधुनिक तकनीकी का अधिकतम उपयोग
4. अनियोजित विकास
5. उत्खनन से उत्पन्न समस्यायें।

निष्कर्ष –

यह सत्य है कि भारत की आजादी के बाद जो संवैधानिक दर्जा उन्हें प्राप्त था, शासन/प्रशासन द्वारा समय–समय पर जो खर्च किया जाता रहा है, उन्हें व्यावहारिक रूप से सुविधाएं सुलभ नहीं हो सकी जिसके कारण जनजातियां अरण्यवासी बनी। इसी कारण तो वे अरण्यक जीवन में कुशल हो गये। उन्हें इतने जीवनोपयोगी उद्योग धन्धों का ज्ञान होता है कि जितना एक विद्वान शिक्षाशास्त्री भी प्राप्त नहीं कर सकता। साथ ही अपने लिए वे अनुबन्ध–कला में प्रवीण्य होते हैं। जंगल के पशु–पक्षियों ज्ञान, बीहड़ रास्तों, शिकार को कुशलता, ऋतु चक्रों का परिचय, वनस्पतियों और जमीन का ज्ञान, काम चलाऊ वैद्यक आदि कितने ही विषयों को उन्होंने अपना लिया। ज्ञान, काम–चलाऊ वैद्यक आदि कितने ही विषयों को उन्होंने अपना बना लिया। आरण्यक जीवन में जो आनन्द उन्हें मिलता है, उसे व्यक्त करने के लिए उन्होंने अपनी संगीत–कला तथा नृत्य–कला भी विकसित की है। कितनी जातियों में एक प्रकार की लोकशैली की चित्रकला भी देखने को मिलती है। इस लोक के समान परलोक का भी उन्होंने चिन्तन किया है और उसका अनुसरण करके धार्मिक विश्वासों, संस्कारों और रीति–रिवाजों की परम्परा भी विकसित की है। लेखन–कला के अभाव में उन्होंने काव्य–कला का आश्रय लेकर इस परम्परा को कायम रखा है। उन्होंने अपने जीवन को विषम परिस्थिति में भी स्वयंपूर्ण और उद्देश्ययुक्त बना लिया है। इस प्रकार के लोगों को अपना बनाने के पूर्व हम उन्हें भली–भांति जान–पहचान लें। जब उनके लिए हमारे मन में प्रेमादर हो, तभी हम इस सारे काम में सफलता प्राप्त कर सकेंगे।

छत्तीसगढ़, झारखण्ड, हिमांचल प्रदेश, उड़ीसा, मद्रास, पश्चिमी बंगाल और राजस्थान के राज्यों में है। देश की अन्य आबादी से बहुत बातों में भिन्न है। जैसे – उनकी भाषाएँ विभिन्न हैं, उनके रस्म–रिवाज भिन्न है, उनके रहन–सहन का तरीका अलग है और आम तौर पर यह कहा जा सकता है कि वे इन विभेदों के कारण अन्य लोगों से सहज में ही अलग पहचाने जा सकते हैं। आपस में भी वे एक–दूसरे से भिन्न हैं। जो विभेद और विभिन्नताएँ उनमें पायी जाती हैं, उनके कारण उनकी समस्या को सुलझाना मुश्किल हो जाता है।

"देश के अनेक भागों में वे जंगल–भरे पहाड़ी इलाकों में रहते हैं और इसलिए उन तक पहुंचना सरल नहीं है। इसलिए अलग बने रहे। यह बात अस्वाभाविक नहीं है कि वे लोग शिक्षा में पिछड़े रहे और उनकी आर्थिक स्थिति भी खराब है। कुछ स्थानों में उन्होंने खेती–बाड़ी शुरू कर दी है, किन्तु अनेक स्थानों में स्थायी दृष्टि से बसे हुए कृषक वे अभी नहीं हो गये हैं और जो कुछ खेती–बाड़ी करते हैं, वह भी बहुत पुराने युग की–सी है। उनके यहाँ कातने–बुनने के कुछ कुटीर उद्योग हैं। उनका रहन–सहन सादा है, किन्तु साथ ही कलात्मक भी हैं। इससे उनकी शारीरिक दशा सुदृढ़ है। यह सच है कि जीवन की आधुनिक सुविधाओं से वंचित हैं। ईसाई मिशनरियों ने इनमें अच्छा काम किया–उनमें शिक्षा का प्रसार किया है और उनकी रहन–सहन की हालातों में सुधार करने में सहायता पहुंचायी है। वे लोग अच्छी संख्या में उन्हें ईसाई बनाने में भी सफल हुए। आसपास की आबादी में घुल–मिल जाने की एक अज्ञात ओर सम्भवतः अदृष्ट क्रिया बराबर चलती रही है और विशेषतया जिन प्रदेशों में वे रहते हैं, उनके छोरवाले क्षेत्रों में आज भी ऐसे लोग बसे हुए हैं, जिनमें से अनेक किसी न किसी समय पर वहाँ की वनजातियों की आबादी के भाग अवश्य रहे होंगे। किन्तु वे लोग उस प्रदेश के समाज में इस प्रकार आत्मसात् हो गये हैं और घुल–मिल गये हैं कि अब यह सम्भव नहीं है कि उन लोगों को वहाँ के अन्य लोगों से अलग पहचाना जा सके और जनजातियों से तो वे सहज में ही अलग पहचाने जा सकते हैं।

ऐसे लोगों का अभाव नहीं है, जो अपने स्वार्थ के लिए इन लोगों के शिक्षा के क्षेत्र में पिछड़े होने के कारण इनका शोषण करने में नहीं हिचकते। अतः बड़े पैमाने पर जिस समस्या का हल हमें करना है, वह यही है कि हम ऐसी सुविधाएँ पैदा करें, जो जनजातियों को शिक्षा और आर्थिक विकास के क्षेत्र में अन्य लोगों के स्तर पर आने में समर्थ कर सकें।

"प्रश्न आता है कि किस प्रकार की उन्नति और प्रगति हम उनके लिए चाहते हैं। क्या यह बात प्रगतिशील समझी जाएगी, यदि वे आज के अनेक भागों में घुल–मिल जाते हैं अथवा क्या यह वांछनीय नहीं है कि उन्हें ऐसी सुविधाएँ प्रदान की जाए जिनसे वे अपने ही तौर पर और अपने रीति–रिवाजों और रहन–सहन और संस्कृति को बनाये रखकर भी अपना आर्थिक और अन्य प्रकार का विकास कर सकें? जो कोई भी तरीका अपनाया जाए, एक बात तो मान लेनी होगी और हर हालत में उस पर चलना होगा–वह यह है कि धर्म, भाषा, रहन–सहन अथवा रीति–रिवाजों की दृष्टि से उन पर किसी चीज को लादने का विचार या अभिप्राय न तो हो सकता है और न होना चाहिए। उस अवस्था में भी, जबकि हमारी यह भावना हो कि जिस धर्म या जीवन की रीति–नीति को हम उन्हें देना चाहते हैं, वह उनके अपने धर्म और रीति–नीति से अच्छी है। यह बात न्यायसंगत नहीं है कि उनकी इच्छा के विरुद्ध हम उसे उन पर लादें।

शोधार्थी का अपना विचार है कि उनकी शिक्षा के लिए और उनकी आर्थिक जीवन में साधारण दृष्टि से सुधार के लिए हमें उन्हें सुविधाएँ प्रदान करनी चाहिए और यह बात उन पर छोड़ देनी चाहिए कि वे अपने चारों ओर के समाज के घुल–मिल जाना या आत्मसात् हो जाना चाहते हैं अथवा अपना पृथक् जनजातीय अस्तित्व बनाये रखना चाहते हैं। अपने यहाँ की रहन–सहन की विभिन्नताओं के कारण भारत में जनजातियों के लिए पर्याप्त अवसर है कि यदि वे ऐसा चाहें तो वे अपना पृथक् सामाजिक अस्तित्व बनाये रखें।

अबूझमाड़ के सम्बन्ध में –
कारण और गतिविधि के मध्य सन्निहित बिन्दु जो उभर कर आये हैं, इस प्रकार हैं –

1.आजादी के बाद राजनेताओं ने अबूझमाड़ के साथ उपेक्षापूर्ण व्यवहार किया है।

2.अबूझमाड़ (ओरछा विकास खण्ड) में वनवासी आदिम जनजातियों के सम्बन्ध में जो भी आर्थिक रूप से जनजाति विकास के सम्बन्ध में अरबों रुपये खर्च किये गये हैं। वे जन जातियों में पारिस्थितिकी के अनुकूल नहीं हैं।

3.जनजातियों के नाम पर केवल शोषण किया जाता रहा है।
4.सत्तासीन राजनेता इसाई मिशनरियों में सांठ–गांठ कर विदेशी सरकार इसाई मिशनरियों के माध्यम से पैसा लेते रहे हैं।
5.इसाई मिशनरियाँ सत्ता का दुरुपयोग कर माओवादी नक्सलवादी लोगों में साठ–गाठ का बौद्धिक रूप में वनवासियों को अस्त्र के रूप में उपयोग कर नक्सलवाद के रूप में प्रयोग करते आ रहे हैं।
6.वर्तमान में नक्सलवाद छत्तीसगढ़ शासन व भारत सरकार के लिए चुनौती बनकर उभर रहा है।

सुझाव –

"संविधान के अनुसार हमें उनकी विशिष्ट देखभाल करनी है और उनकी सहायता के लिए रुपया लगाना है।" मैं केवल साधारण रूप से एक कार्यक्रम सुझाव के रूप में रखता हूँ –

(1) सर्वप्रथम और सर्वोपरि बात यह है कि निम्नतम श्रेणी से लेकर उच्चतम श्रेणी तक की शिक्षा के प्रसार को हम प्रोत्साहन दें।
(2) सरकार को लोकसेवाओं में उन्हें नौकरी देने के लिए कदम उठाना चाहिए।
(3) उनकी कलात्मक अभिरुचि और उनकी स्वाभाविक क्षमता से लाभ उठाकर राज्य को उन्हें ऐसे धन्धों में लगाकर प्रोत्साहन देना चाहिए जो उनके लायक हो।
(4) उनकी आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए उनको भूमि पर बसाने की व्यवस्था होनी चाहिए। कुछ स्थानों में उन्होंने स्थायी दृष्टि से खेती–बाड़ी करना आरम्भ कर दिया है, फिर भी बहुत कुछ करना बाकी है, इसलिए प्रोत्साहन देना चाहिए। वे लोग अपने वन्य जीवन में मोह रखते हैं और उन्हें वनों से बहुत लाभ भी है। इसलिए वनों की रक्षा करते हुए इस बात का प्रयास हो कि उन्हें वनों की सुविधाओं से वंचित न कर दिया जावे, जिनका वे अब तक उपयोग करते रहे हैं और जिनसे उनको काफी सहायता मिलती है। अभी ऐसी अनेकों जातियाँ हैं, जो स्थायी कृषि में नहीं लगी हैं और जो 'दहिया' की कृषि कर लेती है। इस बात का प्रयास होना चाहिए कि उन्हें जमीन पर बसा दिया जावे और दहिया की खेती को प्रोत्साहन नहीं दिया जाना चाहिए। उनको अनुभव करा दिया जावे कि स्थायी कृषि ही अधिक लाभदायक है। वैत्तिक और अन्य लाभकारी सहायता देकर उनको स्थायी जीवन में लाने के लिए तैयार करने का प्रयास हो।
(5) अपनी सामाजिक और अन्य समस्याओं को हल करने के लिए उनके अपने जनजातीय संगठन हैं। इन संगठनों को प्रोत्साहन देना चाहिए कि वे विभिन्न राज्यों द्वारा शुरू और पोषित की जाने वाली पंचायतों के साथ कदम–ब–कदम चलें।
(6) उनके मन में यह भावना निर्माण हो कि वे राष्ट्र के आवश्यक और अविच्छिन्न अंग हैं और किसी भी अन्य समुदाय या वर्ग की तरह ही उनको भी अपना पार्ट अदा करना है।
(8) जनजातियों को जंगली जड़ी बूटियों का अच्छा अनुभव एवं वंशानुगत अनुभव प्राप्त है। चिकित्सा क्षेत्र में जनजातियों के ज्ञान का आयुर्वेद विज्ञान में लिपिबद्ध रूप में समाहित किये जाने का प्रयास सार्थक सिद्ध हो सकता है। इस दिशा में वर्तमान छत्तीसगढ़ सरकार ने जनजातियों को प्रोत्साहन की दृष्टि से घर/जंगलों में आबाद जनजातियों को जड़ी बूटी संग्रहण केन्द्र ग्रामीण वैद्य के रूप में उपकृत कर एक महत्वपूर्ण कार्य किया है।

देश के स्वतंत्र हो जाने पर सन् 1947 से जनजातियों का सुधार छत्तीसगढ़ की राष्ट्र–निर्माणकारी योजनाओं का एक महत्वपूर्ण पहलू रहा है। मध्यप्रदेश से छत्तीसगढ़ का पुर्नगठन के पश्चात् छत्तीसगढ़ द्वारा काफी प्रयास किये गये हैं। पंचवार्षिक योजना में आदिवासी समस्या को हल करते समय केवल एक प्रश्न पर विचार करना कदापि योग्य न होगा। एक ही साथ अनेक मोर्चों पर काम करना है। इसी उद्देश्य को सामने रखकर आदिवासी कल्याण योजना ने अपनी प्रवृत्तियाँ पांच प्रमुख विभागों में बाँट रखी है – जैसे (1) शिक्षा–प्रसार, (2) आर्थिक विकास, (3) स्वास्थ्य संवर्धन, (4) आवागमन के मार्ग और (5) सांस्कृतिक, सामाजिक तथा नैतिक उत्थान। आदिवासियों के मध्य में काम करने वाले कार्यकर्ताओं को बड़ी सजगता से काम करना है। सन्त विनोबाजी ने इसके सम्बन्ध में यह सुझाव दिया है – "वनखण्ड में रहने वाले इन भोले–भाले आदिवासियों का यदि संस्कार बढ़ाया जाए, विकारों से उन्हें मुक्त किया जाए और प्राकृतिक जीवन और भी उच्च बनाया जाए, तो ये बड़े देशभक्त हो सकते हैं। यदि इन आदिवासियों को सही ढंग से तालीम मिले तो अच्छे विद्वान् हो सकते हैं। लेकिन इसके साथ ही साथ इस बात पर भी ध्यान देना होगा कि इन आदिवासियों की जीवन–पद्धति पर किसी प्रकार का आक्रमण न होने पावे; अच्छे संस्कार तो उन्हें मिलें ही, किन्तु इनके अपने सुन्दर संस्कार मिटने देना नहीं चाहिए।"

शासन ने इस दिशा में काफी उत्साहजनक कार्य किया है। भारत सरकार और राज्य सरकारें इस दिशा में जागरुक है और शिक्षा का प्रसार बड़ी तेजी से हो रहा है। रामकृष्ण मिशन का जनजाति जागरुगता एवं शिक्षा सम्वर्धन के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान है, भविष्य में जनजाति जागरण के समान योगदान प्रदान करेगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1.डॉ. शर्मा, ब्रह्मदेव. आदिवासी विकास एवं सैद्धान्तिक विवेचना, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल.
2.नेगी–प्रीतम सिंह (1991). पारिस्थितिकी विकास एवं पर्यावरण भूगोल, रस्तोगी एण्ड कंपनी, मेरठ, पृष्ठ 8.
3.बृजगोपाल (1975). 'पाइप पारिस्थितिकी' तथा पादप भूगोल के मूल तत्व, पृष्ठ 12, जयपुर.
4.नेगी–प्रीतम सिंह. 'पारिस्थितिकी विकास एवं पर्यावरण भूगोल, पृष्ठ 6.
5.छत्तीसगढ के प्रमुख आंकड़े – आर्थिक एवं सांख्यिकीय संचालनालय, छ.ग.।
6.छत्तीसगढ संदेश–सूचना तथा प्रकाशन संचालनालय,. रायपुर।
7.शंकर कमला : रीवा संभाग के आदिवासी क्षेत्रों का भौगोलिक अध्ययन, अप्रकाशित पीएच.डी. शोध प्रबंध, 1988, अ.प्र. सिंह विश्वविद्यालय, रीवा।
8.सिंह, तरुण प्रताप : सीधी जिला की जनजातीय व्यवस्था, पीएच.डी. शोध प्रबंध, अ.प्र. सिंह विश्वविद्यालय, रीवा।
9.पर्यावरण एवं जनजातियां–अस्तित्व के लिये समीकरण, शोध पत्रिका, शासकीय महाविद्यालय, अम्बिकापुर, 1995 ।
10.दैनिक जागरण, दैनिक समाचार पत्र, रायपुर।
11.दैनिक भास्कर, दैनिक समाचार पत्र, रायपुर।
12.देशबन्धु, दैनिक समाचार पत्र, जगदलपुर।

सखाराम कुंजाम
सहायक प्राध्यापक भूगोल ,शास. स्वामी आत्मानंद स्नातकोत्तर महा. नारायणपुर (छत्तीसगढ़)

Publish Research Article
International Level Multidisciplinary Research Journal
For All Subjects

Dear Sir/Mam,

We invite unpublished Research Paper,Summary of Research Project,Theses,Books and Book Review for publication,you will be pleased to know that our journals are

Associated and Indexed,India

- International Scientific Journal Consortium
- OPEN J-GATE

Associated and Indexed,USA

- Google Scholar
- EBSCO
- DOAJ
- Index Copernicus
- Publication Index
- Academic Journal Database
- Contemporary Research Index
- Academic Paper Databse
- Digital Journals Database
- Current Index to Scholarly Journals
- Elite Scientific Journal Archive
- Directory Of Academic Resources
- Scholar Journal Index
- Recent Science Index
- Scientific Resources Database
- Directory Of Research Journal Indexing

Indian Streams Research Journal
258/34 Raviwar Peth Solapur-413005,Maharashtra
Contact-9595359435
E-Mail-ayisrj@yahoo.in/ayisrj2011@gmail.com
Website : www.isrj.org